शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

विजयदान देथा के कथा साहित्य में चित्रित यथार्थ बोध

डॉ.मुकेश कुमार
पी-एच.डी., डी.लिट्.
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय रामपुरा
तहसील हाँसी, जिला हिसार, हरियाणा, भारत

शोध संक्षेप

विजयदान देथा राजस्थानी और हिंदी साहित्य के प्रमुख लोक-कथाकार हैं। इनका संपूर्ण कथा साहित्य युग एवं समाज सापेक्ष है। इन्होंने अपने साहित्य में सामाजिक जीवन में व्याप्त घोर गरीबी, भुखमरी, अभावग्रस्ता, विलासिता, शोषण, हिंसा और हत्या जैसी अनेक जटिल, विद्रूप एवं कारूणिक स्थितियों का मार्मिक एवं यथार्थ चित्रण किया है। इनका यह चित्रण अनुभूतिजन्य होने के कारण अधिक स्वाभाविक, वास्तविक के निकट एवं प्रासंगिक है। इनके कथा-साहित्य की मूल संवेदना भी समाज व परिवेश का यथार्थ चित्रण ही है।

भूमिका

साहित्य समाज की एक सशक्त अभिव्यक्ति है। साहित्य की इस अभिव्यक्ति को सशक्त बनाता है, उसका यथार्थ-बोध। साहित्यकार अपने साहित्य में जब किसी स्थिति, घटना या विषय का वास्तविक और तथ्यात्मक चित्रण करता है, तो उसे ही यथार्थ-बोध कहा जाता है। इसी चित्रण में ही उसकी सार्थकता या प्रासंगिकता निहित है। साहित्य में चित्रित यथार्थ-बोध के माध्यम से ही हमें किसी समाज की स्वाभाविक प्रकृति, संस्कृति, प्रवृत्ति एवं विकृति का बोध होता है। यही बोध हमारे भविष्य का मार्गदर्शक एवं प्रेरणा स्रोत बनता है। साहित्य में यथार्थ से आशय समाज या व्यक्ति की विकट या जटिल परिस्थितियों से है। सामाजिक कारणों से अलग कोई तथ्य व्यक्त नहीं किया जा सकता है। आज सब कुछ इतना भयंकर और शक्तियां इतनी केन्द्रित हैं कि आदर्श की कल्पना भी नहीं की जा सकती। विजयदान देथा ने अपने साहित्य में यथार्थ चित्रण को ही अपना कथ्य बनाया है।

विजयदान देथा के कथा साहित्य में यथार्थ बोध

"राजस्थानी और हिंदी साहित्य के प्रमुख लोक-कथाकार विजयदान देथा भी अपने कथा-साहित्य में ऐसे ही यथार्थों का चित्रण करते हैं। वे समाज में जब भी कोई करूण, दारूण या नृशंस घटना को देखते या सुनते हैं, तो वह उनके मनोमस्तिष्क में गहरे उतर जाती है और वह जब तक अभिव्यक्ति के स्तर तक नहीं पहुँचती है, तब तक उनके हृदय को विदीर्ण करती रहती है। एक बार जयपुर में तिब्बत की पहाड़ी बाला के बलात्कार की मर्मांतक खबर एक पत्रिका में पढ़ने के उपरांत लेखक की मनोस्थिति ऐसी ही हो जाती है। शिवप्रसाद पालीवाल को लिखे एक पत्र में लेखक अपनी मर्मांतक पीड़ा की अभिव्यक्ति करते हुए कहते हैं कि "राजस्थानी पत्रिका में तिब्बत की पहाड़ी बाला के बलात्कार की मर्मांतक खबर पढ़कर माथा ही भन्ना गया। मन आलोड़ित होकर पछाड़े खाने लगा। यों

नित्य-प्रति किसी न किसी के प्रति बलात्कार, कहीं-न-कहीं डकैती, चोरी और हत्याएँ, दुर्घटनाओं की पुनरावृत्ति-इन्हीं बर्बर ख़बरों से अखबार भरे रहते हैं।"1 इनका कथा साहित्य भी ऐसे ही यथार्थ एवं संवेदनाओं का मार्मिक चित्रण करता है। लेखक के इसी साहित्यिक यथार्थ का परिचय देते हुए श्री विजयमोहन सिंह भी कहते हैं कि "पता नहीं चल पाता कि किस करिश्मे या जादुई स्पर्श से वे किसी फैशनेबल जादुई यथार्थ (मैजिकल रियल्जिम) नहीं रचते बल्कि एक सीधे-सादे मानवीय यथार्थ को सामने लाते है।"2 लेखक विजयदान देथा के 'रिजक की मर्यादा' और 'मायाजाल' दोनों ही लघु उपन्यासों में समाज और परिवेश का यथार्थ चित्रण हुआ है। इसमें उन्होंने शिव गाँव में रामदुआरे के महंत व रामभक्तों की विलास-लीला का यथार्थ चित्रण किया है। वे भक्ति और भजन की आड़ में गाँव की भोली-भाली स्त्रियों को फुसलाकर, उनके साथ रंगरेलियाँ मनाते हैं और इसी के साथ रामदुआरे में अपने साथ अनेक संन्यासिनों को भी रखते हैं। उपन्यास के एक प्रमुख पात्र मायापति के माध्यम से गाँव के भोले-भाले लोगों के शोषण के यथार्थ का भी चित्रण किया गया है। मायापति सेठ स्वयं अपनी शेषकीय प्रवृत्ति का चित्रण करते हुए कहता है कि "आप शायद ही विश्वास करें कि हम सबने अब तक चुपड़ी रोटी तक नहीं खाई। मनुष्य होकर जोंक की जिन्दगी जी है। जो भी मेरी पेढ़ी पर चढ़ा, उसका अपनी बहियों के अनुसार इतना खून चूसा है, जितना कि ब्याज और मूल चुकाने के लिए वह जिंदा रह सके।"3 इसी के साथ लेखक ने यहाँ पर उपन्यास के नायक शंकर भाँड़ के माध्यम से भूख, गरीबी व गजालत के यथार्थ का भी मार्मिक चित्रण किया है। शंकर भाँड़ एक बहरूपिया है और लोगों का मनोरंजन कर अपना व परिवार का पेट पालता है। एक बार वह महात्मा का स्वाँग कर शिव गाँव के रामदुआरे में चौमासा करने के लिए रूक जाता है। वह अपने रिजक (पेशे) की मर्यादा का हर हाल में निर्वाह करता है। इसके लिए वह कोई भी कष्ट उठाने को तैयार हो जाता है। यहाँ तक कि इसके लिए वह कई बार घर-परिवार और स्वयं के प्राणों को भी दाँव पर लगाने को तैयार हो जाता है। जब तक उसका स्वाँग पूरा नहीं हो जाता, तब तक वह अपना भेद किसी के सामने नहीं खोलता था। जब उसका स्वाँग पूरा हो जाता था, तो वह अपनी बगलें बजा-बजाकर और गिड़गिड़ाकर लोगों से बख्शीश माँगता है। इसका चित्रण करते हुए लेखक कहता है कि "हाथ जोड़कर बोला, 'चार महीने से घरवाले बुरी तरह से बाट जोह रहे हैं। राज्य के जाने-माने भाँड को खुले हाथ से बखसीस दें प्रभु, बच्चों की भूखी प्यासी अँतड़ियाँ आप सबको आसीस देंगी...।"4 शंकर के घर से निकलने के बाद परिवार की आर्थिक स्थिति अत्यंत ही दयनीय हो गई थी। यहाँ तक कि भूखे मरने तक की नौबत आ जाती है। शंकर की पत्नी पारबती अपने इसी पारिवारिक यथार्थ का चित्रण पति के समक्ष करते हुए कहती है कि "तुम्हारे जाने के बाद तीन दिन तक रोटी-पानी का जुगाड़ नहीं हुआ तो मैं बच्चों को बरगलाकर आपघात करने को तैयार हो गई।"5 यदि उस दिन ठीक समय पर सरजू भाभी उसे न बचाती, तो वह उसी दिन मर गई होती। यहाँ पर हमें शंकर भाँड़ के परिवार की गरीबी, अभाव एंव भूखमरी के यथार्थ के साक्षात् दर्शन होते हैं।

लेखक ने अपने 'मायाजाल' उपन्यास में कुम्हार के पारिवारिक जीवन के माध्यम से घोर-गरीबी एवं अभाव के साथ ही माया के मद में उन्मत्त

माता-पिता द्वारा स्वयं अपने ही पुत्र लछमन की हत्या के अति-नग्न यथार्थ का चित्रण भी किया है। गरीबी और अभाव की मार से पीड़ित कुम्हार और कुम्हारी आखिरकार सेठ के कहने पर अपना पुश्तैनी गाँव व काम छोड़कर सेठ की नौकरी स्वीकार कर लेते हैं। सेठ माया का लालच देकर उनके बेटे लछमन को अपने व्यापार में भागीदार बनाकर नौ साल के लिए दिसावरों में ले जाता है। कुछ समयोपरांत जब सेठ व पुत्र की कमाई उनके पास आने लगती है, तो वे गरीबी के दिन याद करते हुए अत्यधिक सुख का अनुभव करने लगते हैं। इसके बाद वे अधिकाधिक धन के संग्रह की लालसा में एक-एक करके डाकू लछमन सिंह और सेठ दोनों को ही मौत के घाट उतार देते हैं। इसके बाद भी उनकी माया की भूख शांत नहीं हो पाती है और इसी प्रकार एक दिन अज्ञानतावश अपने बेटे लछमन को भी कोई अन्य सेठ समझकर मौत के घाट उतार देता है। लेखक इस मार्मिक घटना का चित्रण करते हुए कहता है कि "और उस दुहरी खुशी की मदहोशी में उसने सधे हुए एक ही प्रहार में गरदन देह से जुदा कर दी। धर्मात्मा सेठ की नाईं उस नौजवान को भी पता नहीं चला कि नींद में सोते-सोते उसकी गरदन चाक हो गई है।... धर्मात्मा सेठ के साथ वहीं दूसरे तहखाने में वह दफन हो गया। तब पूर्णतयाः आश्वस्त होकर कुम्हार दम्पती ने सवा हाथ खाली तहखाने को तुरता-फुरत भरना शुरू कर दिया। भाग्य प्रबल हो तो सफलता पाँव चूमने लगती है। ठसाठस भरने के बाद भी आधा मजूंस खाली रह गया।"6 गौने का इंतजार कर रही पुत्रवधू जब वहाँ पहुँचकर उन्हें यथास्थिति से अवगत करवाती है, तो कुम्हार ने उसी तलवार से कुम्हारी का गला चाक कर दिया। इस दृश्य को देखकर बहू और भी अधिक उन्मादित होकर दौड़ने लगती है। कुम्हार भी वही तलवार लेकर उसके पीछे दौड़ते-दौड़ते, उसी तलवार पर गिरकर घायल हो जाता है और बहू उसी तरह भागती रहती है। लेखक उनके इसी यथार्थ का चित्रण करते हुए कहता है कि "वह अब भी अधमरी हालत में उसी तरह छटपटा रहा था और बहू बेतहाशा भाग रही थी और तब तक भागती रहेगी, जब तक उसका गौना और उसकी आशाएँ सम्पन्न नहीं होती। ...निरंतर भागती ही रहेगी... अविराम.....अविश्रान्त!"7 माया भी इतनी निर्मोही और क्रूर हो सकती है, यह हमें कुम्हार व कुम्हारी के जीवन के इसी करूण, मार्मिक एवं दारूण यथार्थ से सहज ही पता चल जाता है।

लेखक की 'कुदरत की बेटी' कहानी में राज-समाज की विलासप्रियता के साथ ही सामान्य प्रजा की गरीबी एवं भुखमरी के यथार्थ का चित्रण हुआ है। एक राज्य में एक सुंदर, जवान एवं फटेहाल भिखारिन रहती थी, जो लोगों की दया पर जीवन गुजर-बसर करती थी। उसके जीवन का एक नियम यह भी था कि वह हर रोज किसी एक ही घर में भीख माँगने जाती थी, यदि उस घर में उसे भीख न मिलती तो वह उस दिन भूखी ही रहती थी। एक दिन तालाब से पानी भरकर लाते हुए उस पर राजा की नज़र पड़ जाती है। वह उसके अद्वितीय रूप-सौंदर्य और यौवन पर मदमस्त हो जाता है और दीवान से उसे राजमहल में प्रस्तुत करने का आदेश दे देता है। लेखक उसकी इस विलासप्रियता का चित्रण करते हुए कहता है कि "उसकी लहराती चाल देखकर ही राजा मुग्ध हो गया।....अनुभवी राजा की पैनी नज़र उस औरत की सुगठित देह को टोहने लगी।. झीर-झीर चिथड़ों से उसका संयमित यौवन मोतियों की नाई दमक रहा था।.... हाथ के इशारे की सीध में अप्सरा का हुलिया देखा तो

दीवान ने आश्चर्य से पूछा, 'कौन यह भिखारिन ? यह तो रूखे-बासी टुकड़ों के लिए दर-दर भटती है अन्दाता....।' आगे की बात सुने जितना संयम राजा में नहीं था। झिड़कते बोला, 'भिखारिन हुई तो क्या हुआ, है तो औरत ही।"8 यहाँ पर एक विलासी राजा के यथार्थ का ही चित्रण हुआ है।

लेखक की 'झूठी आस' कहानी भी ठाकुर-समाज की इसी प्रकार की विलासप्रियता और ढोली-समाज की गरीबी के यथार्थ का स्वाभाविक एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती है। कहानी का ठाकुर बड़ा ही रसिया एवं मनमौजी है। ढोली-समाज की आजीविका ठाकुर की दया दृष्टि पर ही निर्भर करती थी। प्रतिदिन एक ढोली ठाकुर के महल पर, उसे 'सुभराज' (प्रातः वंदन) करने के लिए जाया करता था। जागने पर ठाकुर यदि मौज में होता, तो उस ढोली पर अपनी कृपा दृष्टि बरसाने लगता और नहीं तो उसे दुत्कार देता। वह उनसे हर रात एक सुन्दर लड़की की माँग भी करता था, जिसको वे चुपचाप पूरी भी करते रहते थे। एक बार उसने सभी ढोलियों को बुलाकर डाँटते और झिड़कते हुए स्पष्ट कह दिया कि ".... तुम कमीन-कारूओं से भी बड़ी चीजें ही माँगी जाती हैं - रूप, जोबन...समझे कि नहीं.....? समझ गए अन्नदाता!.....अब तुम पर नाराज़ नहीं होऊँगा। मगर बिना कहे ही, जो बढ़िया माल हो, पेश करते रहना।"9 इस प्रकार ठाकुर की कृपा पाने से गरीबी और भूख के मारे लाचार ढोली, न चाहते हुए भी कलेजे पर पत्थर रखकर अपनी ही बेटी या भतीजी को उसके हुजूर में पेश करने को विवश थे।

लेखक की 'बैंडमास्टर इब्राहिम', 'ठाकुर का भूत', 'दूरी' और 'कागमुनि' चारों ही कहानियाँ शोषण की चक्की में पिसते गरीब व अभावग्रस्त समाज का यथार्थ चित्रण करती हैं। 'बैंडमास्टर इब्राहिम' कहानी का मुख्य पात्र इब्राहिम विवाह जैसे मांगलिक अवसरों पर बैंड-बाजा बजाने वाले वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। समाज में कई जगह इन बैंड वालों की बड़ी ही मान-मनुहार की जाती है और कई जगह तिरस्कार। एक बार इब्राहिम अपनी टोली के साथ नगर के एक सेठ के लड़के की शादी में जाता है। बैंड बजाने के बाद सेठ ने उन्हें खाना खिलाने से मना कर दिया, जिसके कारण वे भड़क जाते हैं। जिसके कारण वह उन्हें पारिश्रमिक देने से भी मना कर देता है और उनका तिरस्कार भी कर देता है। वे वहाँ से भूखे ही आधी रात को घर लौट आते हैं। इब्राहिम एक टूटी-फूटी कोठरी में अपने भानजे बरकत के साथ रहता है। वह सोचता है कि अब घर जाकर ही खाना खाएगा लेकिन आटे के अभाव में मामा व भानजा दोनों को भूखे ही वह रात काटनी पड़ती है। इसी कारण वह अपने भानजे को भी सेठों की नौकरी के प्रति आगाह करते हुए स्पष्ट कह देता है कि "..... तू दो टके की हमाली कर लेना, बूट पालिश कर लेना, न हो तो भीख माँग लेना, मगर किसी सेठ की नौकरी मत करना। ये इनसान को इनसान नहीं समझते।"10

इसी प्रकार 'ठाकुर का भूत' कहानी भी ठाकुर द्वारा किसान के शोषण एवं गरीबी के यथार्थ का ही चित्रण करती है। इस कहानी का ठाकुर जीते जी तो गरीब किसानों का शोषण करता ही हैं, लेकिन मरने के बाद भी वह इनका पीछा नहीं छोड़ता है। गाँव का बड़ा किसान गाँव-चौधरी है। जब वही चौधरी ही ठाकुर के कर्ज़ से मुक्त नहीं हो पाता, तो एक सामान्य किसान की बिसात ही क्या ? लेखक उस गाँव-चौधरी की गरीबी एवं शोषण के यथार्थ का चित्रण करते हुए कहता है कि "उस ठिकाने में हजार मन के खलिहान का फकत एक किसान था, गाँव-चौधरी। मगर

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

ठिकाने के कारिन्दों ने उसे कभी चैन से नहीं जीने दिया। घर के सब जन रात-दिन काम करते थे फिर भी गृहस्थी की गाड़ी बड़ी मुश्किल से चलती थी। पीढ़िया माटी में घुल-मिल गयी, किन्तु सिर से कभी कर्ज नहीं उतरा।"11 ठाकुर के मरने के बाद उसका भूत खेतों में रहने लग जाता है और गाँव वालों को खेतों में काम नहीं करने देता। एक बार वह डरा-धमका कर गाँव-चौधरी के खेत भी बिना फसलों के सूने रख देता है। अंत में ठाकुर का भूत स्वयं गाँव चौधरी के समक्ष अपनी करतूतों को बयान करते हुए कहता है कि "चौधरी दुनिया में पागल तो बहुतेरे देखे, पर तेरे जैसा नहीं देखा! तुझे विश्वास हो गया कि मैं कौल मुजब बाजरा दे दूँगा ? पगले, जब तक जिया तुम लोगों को दुःख दिया, अब मरकर सुख दिया तो नरक में नहीं जाऊँगा ? यह कौल नहीं करता तो तू खेती किये बिना मानता थोड़े ही ! हलके में सबसे बढ़िया उपज होती। यह मुझसे देखा जाता भला।"12

लेखक की 'दूरी' कहानी गाँव के लुहार समाज की गरीबी एवं शोषण की व्यथा का यथार्थ चित्रण करती है। कहानी की मुख्य नारी पात्र एक बुढ़िया हज्जा माऊ है। वह और उसका परिवार हाड़-तोड़ परिश्रम करने के उपरांत भी गाँव के साहूकार (बोहरा) के कर्ज़ से मुक्त नहीं हो पाता है। यहाँ तक कि उनके पास किसी आकस्मिक विपदा से निपटने के लिए भी कुछ नहीं है। उसका जवान बेटा झोला जब बीमार पड़ता है, तब भी वह किसी की कृपा से ही उसे ईलाज के लिए शहर भेजती है। इस पर बोहरा अपना कर्ज़ न चुकाने के लिए भला-बुरा कहता है, जिस पर वह अत्यधिक पीड़ित होती है। इसी प्रकार के शोषण की व्यथा 'कागमुनि' कहानी में साँप और कमेड़ी के माध्यम से अभिव्यक्त की गई है। यहाँ पर साँप शोषक वर्ग और कमेड़ी शोषित वर्ग का प्रतीक है। एक कमेड़ी एक वृक्ष पर हर साल अण्डे देती और जब अण्डों से बच्चे निकलते तो पेड़ की खोखर में रहने वाला साँप उनको खा जाता। कमेड़ी हर बार अपने बच्चों को बचाने के लिए साँप के सामने गिड़गिड़ाती और साँप हर बार यही कहता कि वह अगली बार कुछ नहीं करेगा। कमेड़ी हर बार आशा का दामन थाम लेती और आगे की तैयारी शुरू कर देती। शोषित वर्ग भी इसी प्रकार एक आशा के सहारे ही शोषक से मुक्ति के लिए कड़ी मेहनत करता रहता है।

'आशा अमरधन' और 'बड़ा कौन' दोनों ही कहानियाँ गरीबी और अभाव से पीड़ित निरीह किसान की व्यथा का चित्रण करती हैं। 'आशा अमरधन' कहानी में शोषक व प्रकृति की मार पीड़ित एक किसान की व्यथा के साथ ही एक विमाता के क्रूर एवं निर्दयी व्यवहार के यथार्थ का बड़ा ही करूण एवं मार्मिक चित्रण हुआ है। कहानी का किसान एक तो पहले से ही बोहरे (साहूकार) के कर्ज़ में डूबा हुआ है और ऊपर से घर में प्रतिवर्ष प्रसव से उत्पीड़ित घरवाली दो बिसूरते बच्चों (दो वर्ष की लड़की और एक वर्ष का लड़का) को छोड़कर उस नारकीय जीवन से हमेशा के लिए छुटकारा पा जाती है। इसी के साथ कभी अकाल और कभी बीमारी जैसी आपदाएँ भी आ जाती हैं, जिसके कारण उसकी आर्थिक स्थिति और भी अधिक बदहाल हो जाती है। लेखक उसकी इसी बदहाली के यथार्थ का चित्रण करते हुए कहता है कि "कुएँ में सहजे का पानी, बोहरे का कर्ज, पाँवों के नीचे मगरेटी (पथरीली) जमीन, ऊपर आकाश में अविश्वासी बादल, घर में प्रतिवर्ष ब्याने वाली जोरू और आठों प्रहर नोचनें को ठाकुर-इन छह दुश्मनों के चंगुल में स्वयं भगवान भी फँस जाए तो मुँह में

त्रण लेकर उसे भी सौ बार शिकस्त खानी पड़े। फिर मारवाड़ के जनम-दुखियारे किसान की तो बिसात ही क्या।"13 उसका जीवन विपदाओं का अजायबघर बन जाता है, जिसमें से एक के बाद दूसरी विपदा स्वयंमेव प्रकट होती रहती हैं। इसमें से सबसे बड़ी विपदा उस समय निकलकर आती है, जब घर में बच्चों की सौतेली माँ आ जाती है। सौतेली माँ का क्रूर एवं निर्दयी व्यवहार तो जगत् प्रसिद्ध है। भला उसके बच्चे उससे कैसे बच पाते। उसने तो आते ही अपना रंग दिखाना शुरू कर दिया। ऊपर से अकाल पड़ जाता है। किसान दाने-दाने को मोहताज हो जाता है। अब गाँव छोड़ने के अतिरिक्त उसके पास अन्य कोई रास्ता नहीं था। घरवाली के तेवर भी कड़े हो गए थे। उसने दो टूक कह दिया कि अब उसके साथ या तो बच्चे रहेंगे या वह। अंततः वह इतनी निर्दयी हो जाती है कि वह बच्चों को भूखे-प्यासे रखकर मारने के लिए कोठरी में बंद करके एक साल के लिए पति को साथ लेकर मालवा चली जाती है। पीछे से भोले-भाले बच्चे निरंतर उनके लौटने की आशा में तिल-तिल मरते रहते हैं।

इसी प्रकार लेखक की 'बड़ा कौन' कहानी में भी एक दलित नामक निरीह किसान की व्यथा के यथार्थ का मार्मिक चित्रण हुआ है। उस किसान का बड़ा भाई दौलत और उसकी भाभी दोनों ही उसका शोषण करते हैं। खेतों में हाड़-तोड़ मेहनत करने के उपरांत भी वह इतना संग्रह नहीं कर पाता कि वह पूरे साल पेट भर सके, उसे अधिक की कामना नहीं है। वह तो केवल पेट की ही लड़ाई लड़ता रहता है। इसी कारण वह अपने खेत में पैदा हुए काकड़ी व मतीरों में भरे बहुमूल्य हीरे-मोतियों के बदले एक व्यापारी से केवल साल भर की ज्वार व बाजरी ही स्वीकार करता है। यहाँ पर एक भोले-भाले और अभागे किसान के संघर्षमय जीवन के यथार्थ का ही स्वाभाविक एवं मार्मिक चित्रण हुआ है।

निष्कर्ष

संक्षेप में अध्ययनोपरांत सहज ही यह कहा जा सकता है कि लेखक विजयदान देथा का कथा-साहित्य जीवन के कटु यथार्थों की भावभूमि की ही उपज है। इनके साहित्य में चित्रित यह यथार्थ काल्पनिक नहीं अपितु अनुभूति जन्य है। यही अनुभूति-जन्य यथार्थ ही लेखक के कथा-साहित्य को उपादेय व प्रासंगिक बनाता है और हमें समाज का पूर्णतः बोध करवाता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. विजयदान देथा, 'उजाले के मुसाहिब', ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2000, पृष्ठ पुनश्च से
2. विजयदान देथा, 'छब्बीस कहानियाँ', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2011, पृष्ठ - भूमिका से
3. विजयदान देथा, 'त्रिकोण', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2012, पृष्ठ 46
4. वही, पृष्ठ 54
5. वही, पृष्ठ 61
6. वही, पृष्ठ 201
7. वही, पृष्ठ 206
8. वही, पृष्ठ 210-11
9. विजयदान देथा, 'छब्बीस कहानियाँ', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2011 पृष्ठ 248
10. वही, पृष्ठ 23
11. वही, पृष्ठ 293
12. वही, पृष्ठ 300
13. विजयदान देथा, 'उजाले के मुसाहिब', ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2000 पृष्ठ 36